Impact Factor (QJIF): 8.38 E-ISSN: 2583-7206, P-ISSN: 3049-2432

International Journal of All Subject Research

Received: 03/March/2026 IJASR: 2026; 5(3):54-57 Accepted: 11/April/2026

संस्कृत वाङ्मय में जलवायु संरक्षण के उपायः एक विवेचनात्मकाध्ययन

*[1]सावित्री और [2]डॉ. पूनम पाण्डेय

*[1]शोध छात्रा, संस्कृत एवं प्राकृत भाषा विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत।

[2]निर्देशिका, पं. दीन दयाल उपाध्याय राजकीय महिला महाविद्यालय राजाजी–पुरम, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत।

सारांश

संस्कृत साहित्य भारतीय संस्कृति का प्रधान वाहक है। भारतीय संस्कृति प्रकृति के पवित्र वातावरण और तपोवन में पल्लवित तथा पुष्पित हुई है। संस्कृत साहित्य में वर्णित रम्य और भव्य जलवायु विश्व के अन्य साहित्य में प्राप्त नहीं होती। हमारे समाज की सांस्कृतिक, दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, नैतिक जलवायु की समृद्धि का प्रमुख कारण हमारा समृद्ध साहित्य ही है। प्राचीन ऋषि मुनियों ने जलवायु संरक्षण को सर्वाधिक महत्व दिया क्योंकि वह जानते थे कि पेड़–पौधे, पशु–पक्षी तथा जीव–जंतुओं का विनाश हो गया तो विश्व पर्यावरण प्रदूशित हो जाएगा और मनुष्य का बचना दुर्लभ हो जाएगा, क्योंकि शुद्ध पर्यावरण में ही मनुष्य का जीवन संभव है शुद्ध हवा, शुद्ध जल के अभाव में मनुष्य का जीवित रहना असंभव है।

जलवायु संरक्षण वर्तमान समय की सबसे बड़ी चुनौती है जो मानव के अपने ही द्वारा किए गए अधर्मजन्य अपराधों से उत्पन्न हुई है।जलवायु असंतुलित हो गई है उसके भयावह परिणाम सामने आ रहे हैं। विवेक हीनता के कारण जलवायु के प्रति हमारा अपराध बढ़ता जा रहा है हम अपनी जलवायु का सदैव दोहन करने के स्थान पर उसका क्रूर शोषण कर रहे हैं। नदियाँ सुख रही हैं। उनमें अब जल का स्तर सिमट गया है, वन बड़ी तेजी से कट रहे हैं, हरियाली समाप्त हो रही है, पर्वत नंगे होकर ठिठुर रहे हैं, वायुमंडल जहरीली गैसों का भंडार बनता जा रहा है, ओजोन परत छीड हो रही है, आकाश इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यमों का रण स्थल बन चुका है। पशु–पक्षियों और वनस्पतियों की न जाने कितनी प्रजातियां हमारी आंखों के सामने ही लुप्त हो चली है। पृथ्वी कराह रही है।समुद्र कांप रहे हैं। प्रकाश विकृत हो रहा है। फलतः सारे राष्ट्र त्राहि त्राहि का अंतरनाद कर रहे हैं फिर भी जागरूकता और जन चेतना के अभाव में आंख मूंद कर हम जिस डाली पर बैठे हैं उसी को काट रहे हैं। इस भीषण वर्तमान समस्या के समाधान के लिए निश्चय ही हमें देव वाणी संस्कृतऔर सनातन संस्कृति की शरण में जाना होगा यदि हम वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जलवायु के प्रति चिंतित हैं तो हमें अनिवार्यतः साहित्यक उपायों का आश्रय लेना चाहिए और उस चेतना का जन–जन में प्रचार प्रसार करना चाहिए।

मुख्य शब्दः जलवायु परिवर्तन, जनचेतना, इलेक्ट्रॉनिक प्रदूषण, मौसम गतिविधियां, जलवायवीय संघटनाएं आदि।

प्रस्तावना

संस्कृत साहित्य भारतीय संस्कृति का प्रधान वाहक है। भारतीय संस्कृति प्रकृति के पवित्र वातावरण और तपोवनों में पल्लवित तथा पुष्पित हुई है। संस्कृत साहित्य में वर्णित रम्य और भव्य पर्यावरणीय कल्पना विश्व के अन्य साहित्य में प्राप्त नहीं होती। हमारे समाज की सांस्कृतिक, दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, नैतिक तथा पर्यावरणीय समृद्धि का प्रमुख कारण हमारा समृद्ध साहित्य ही है। प्राचीन ऋषि–मुनियों ने प्रकृति संरक्षण को सर्वाधिक महत्व दिया। क्योंकि वे जानते थे कि पेड़–पौधे, पशु–पक्षी तथा जीव–जन्तुओं का विनाश हो गया तो विश्व पर्यावरण प्रदूषित हो जायेगा और मनुष्य का बचना दुर्लभ हो जायेगा हिसका प्रमुख कारण यह है कि मनुष्य का प्रकृति का अत्यधिक दोहन करना, प्रकृति के नियमों का उल्लंघन करना। मनुष्य का वास्तविक विकास तभी सम्भव है जब वह प्रकृति के मध्य रह कर अपना जीवन मापन

*Corresponding Author: सावित्री

करे।

विज्ञान ने मनुष्य को कई सुविधायें दी हैं, लेकिन कहीं अधिक समस्याएँ भी दी हैं। इन समस्याओं का प्रमुख कारण रहा है– अविवेकपूर्ण असन्तुलित औद्योगिक विकास। इस अधाधुन्ध औद्योगिक विकास का उष्परिणाम यह हुआ कि हमारा समूचा परिवेश जीवन–घातक तत्त्वों से आज न तो सांस लेने के लिए शुद्ध वायु रह गई है और न ही पीने को शुद्ध पानी। आज के औधोगिक युग में जलवायु के बिगडने की गति दिन–प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है। यदि समय रहते कुछ गेस कदम न उगये गये तो वह दिन दूर नहीं जब जल और वायु पूर्णरूप से विकृत हो जायेगी। जल और वायु के अभाव में प्राणी का जीवित रहना असम्भव है।

मनुष्य स्वभाव से एक परिवर्तनशील प्राणी है। इसी परिवर्तन की प्रवृत्ति के कारण वह अपने आसपास की वस्तुओं और पर्यावरण, सामाजिक व्यवस्था इत्यादि में निरन्तर सुधार करता रहता है। निश्चित तौर पर हम पिछ ले किसी भी कालखण्ड की तुलना में एक तथाकथित बेहतर भौतिकवादी दुनिया में रहते हैं, लेकिन नई दुनिया हमें पर्यावरण के दोहन की कीमत पर मिली है। यह विडम्बना ही है कि जब मानव समाज विकसित नहीं था तब जलवायु परिवर्तन एवं संसाधनों का अनियन्त्रित दोहन जैसी समस्याएं मौजूद नहीं थीं। हम जैसे–जैसे विकास की दौड़ में आगे बढ़ते जा रहे है, जलवायु सम्बन्धी समस्या को पीछे छोड़ते जा रहे हैं इस प्रवृत्ति से वर्तमान में विभिन्न प्राकृतिक आपदाओं की आवृत्ति निस्तर बढ़ती जा रही है तथा आज यह समस्या जलवायु परिवर्तन तक पहुंच चुकी है, जिसने मनुष्य के अस्तित्व पर प्रश्नचिहन लगा दिया है।

अब सवाल उठते हैं कि जलवायु परिवर्तन क्या है? इसके क्या कारण है? यह समस्या सिर्फ वर्तमान में ही मौजूद है या प्रकृति में हमेशा से जलवायु परिवर्तन होते रहे हैं? जलवायु परिवर्तन के संभावित परिणाम क्या होगें ? जलवायु संरक्षण के क्या उपाय हो सकते हैं? भारतीय सन्दर्भ ने इसके क्या परिणाम देखने को मिल सकते हैं? राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जलवायु परिवर्तन को रोकने के लिए कौन–कौन से प्रयास किये गए हैं? इन प्रश्नों से गुजरकर ही जलवायु के संभावित परिणामों को संस्कृत वाङ्मय में बहुआयामी ढंग से समझा जा सकता है।

वस्तुतः जलवायु परिवर्तन का अभिप्राय मौसमी प्रतिरूप में लम्बे समय तक के परिवर्तन से है। पृथ्वी की जलवायु गतिशील है, जो प्राकृतिक चक्र के अनुसार सदैव बदलती रहती है अर्थात् जलवायु परिवर्तन एक प्राकृतिक क्रिया है किन्तु मानवीय गतिविधियों डारा जलवायु परिवर्तन की दर में आई वृद्धि चिन्ता का विषय है। जलवायु मे आए इन परिवर्तनों के कारणों को दो भागों में बॉटा जा सकता है, पहला–प्राकृतिक और दूसरा मानवीय गतिविधियॉ, किन्तु जलवायु परिवर्तन का मुख्य कारण मनुष्य ही है। औद्योगिक क्रान्ति के पश्चात् मनुष्य ने प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन किया। इन मानवीय गतिविधियों के कारण प्रदूषण ग्लोबल वार्मिंग, पर्यावरण में घास जैसी समस्याएं उत्पन्न हुई। मनुष्य द्वारा औद्योगीकरण व नगरीकरण की प्रक्रिया तथा संसाधनों के अंधाधुंदा दोहन से उत्पन्न समस्याओं का ही परिणाम जलवायु परिवर्तन है।

अगर हम जलवायु परिवर्तन के कारकों की चर्चा करें तो प्राकृतिक गतिविधियों के अन्तर्गत भूकम्प, ज्वालामुखी उद् भेदन, समुद्री बहाव में बदलाव, सौर विकिरण में विभिन्नता, महाद्वीपीय संवहन इत्यादि शामिल हैं तो वहीं मानव जनित कारकों में भूमि उपयोग में परिवर्तन, नगरीकरण औद्योगीकरण, वनोन्मूलन, खनिज खनन, जनसंख्या वृद्धि तथा निरन्तर बढ़ती जनसंख्या के कारण भरण–पोषण हेतु अधिकाधिक खाद्यान्न उपजाने के लिए रासायनिक कीटनाशकों एवं उर्वरकों का असीमित उपयोग आदि शामिल हैं। आई.पी.सी.सी. (इण्टरगवर्नमेण्टल पैनल ऑन क्लाइमेट चेन्ज) सहित अनेक वैश्विक संस्थाओं की रिपोर्टों ने जलवायु परिवर्तन की पुष्टि की है। सन् 1961 तथा 1990 के बीच पृथ्वी का औसत तापमान लगभग 14 डिग्री सेल्सियस था। वर्ष 1998 में यह बढ़कर 19.52 डिग्री सेल्सियस दर्ज किया गया था। उल्लेखनीय है कि सन् 1850 से अब तक के सर्वाधिक 12 गरम वर्षों की गणना करें तो हम पाएगें कि सन् 1995 से 2023 तक के 20 वर्ष पिछले 100 वर्षों में सर्वाधिक गरम थे अर्थात् जलवायु का वैश्विक संकट लगातार बढ़ रहा है।

संस्कृत वाङ्मय में जलवायु संरक्षण के विषय में बात करें तो जलवायु परिवर्तन किसी अचानक आई विपदा की भाँति प्रभावी न होकर धीरे–धीरे पृथ्वी और यहां रहने वाले जीवों के लिए प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप में अनेक समस्याओं को जन्म देता है। जलवायु परिवर्तन के संरक्षण हेतु संस्कृत साहित्य में ऋषि–मुनियों ने महाकवियों ने अनेक उपायों का अपने साहित्य में विवेचन किया है। जिसकी समाज को जरूरत है क्योंकि जलवायु परिवर्तन का जैवविविधता, मानव संसाधन, प्रकृति, पर्यावरण, सतत विकास, आर्थिक संवृद्धि, शासन व्यवस्था, मनुष्य के स्वास्थ्य इत्यादि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है । जलवायु परिवर्तन से हिम आवरण, ताजे जल एवं समुद्री परिस्थिति में बदलाव उत्पन्न होगा जिससे ग्लेशियर के पिघलने से समुद्री जलस्तर में वृद्धि होगी। यदि इसी तरह से समुद्री जलस्तर में वृद्धि होती रही तो ध्रुवीय क्षेत्रों में जीवन पूरी तरह समाप्त हो जाएगा और कई द्वीपीय देश डूबने के कगार पर पहुंच जाएंगे। प्रशान्त महासागर का द्वीपीय देश किरीबाती तथा हिन्द महासागर का देश 'मालदीव' तथा अन्य स्कैंडनेवियन देश जलवायु परिवर्तन से छटपटा रहे हैं। वातावरण के लगातार बदलते रहने से पेड़ों की कई प्रजातियों विलुप्ति के कगार पर पहुंच जाती हैं, जिससे जैव विविधता का ह्रास होता है। जलवायु परिवर्तन के कारण मानसून के प्रतिरूप में परिवर्तन आएगा, जिससे सूखा एवं बाढ़ जैसी घटनाओं की संख्या में वृद्धि देखने को मिलेगी। इससे उस क्षेत्र के निवासियों पर आजीविका का संकट उत्पन्न होगा। इसके अतिरिक्त कृषि उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा, फलतः विश्व में

बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए खाद्यान्न उत्पादन का संकट उत्पन्न होगा। जलवायु परिवर्तन का ''आहार गुणवत्ता' पर भी विपरीत प्रभाव पड़ेगा। जलवायु परिवर्तन के कारण मानव पर इसका किस प्रकार प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा, इस सच्चाई को हाल ही में महाकवि अभिराज राजेन्द्र मिश्र द्वारा वामनावतरणम्1 महाकाव्य में बखूबी दर्शाया गया है कि कैसे जलवायु परिवर्तन से एक किसान की स्थिति दयनीय हो जाएगी। इस विषय का विवेचन महाकवि गोस्वामी बलभद्र प्रसाद शास्त्री के महाकाव्य भागीरथी दर्शन2 मे में भी किया गया है।

इसी क्रम में जलवायु परिवर्तन के कारण विभिन्न प्रकार की स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएं, जैसे– संक्रामक रोग, ष्वसन सम्वन्धी रोग, विषाक्तता, कोरोना, मानसिक रोग इत्यादि उत्पन्न होगे, जिसके कारण निम्न सामाजिक–आर्थिक स्थिति से मानव की क्षमता व कार्यकुशलता पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न खाद्यान्न संकट के कारण व्यक्तियों में आपस में कटुता एवं हिंसा जैसी भावना को बढ़ावा मिलेगा और मानवीय मूल्यों का ह्रास होगा। विकासशील देशों की अर्थव्यवस्था पर जलवायु संकट से गम्भीर समस्या उत्पन्न होगी, क्योंकि इससे कृषि अर्थव्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। फलतः इन देशों में शासनव्यवस्था में अस्थायित्व उत्पन्न होने से आतंकवाद, मानव सभ्यता के विरुद्ध गति–विधियों को बढ़ावा मिलेगा और सम्पूर्ण विश्व में अशांति उत्पन्न होगी। जलवायु परिवर्तन के इस संभावित भयावह परिणामों पर महाकवि ब्रह्मदत्त वाग्मि ने पार्यचरितामृतम में सही ही कहा है। [3]

आधुनिक संस्कृत महाकवियों ने अपने अद्यतन ग्रथों में भारत को जलवायु परिवर्तन से सबसे ज्यादा खतरा बताया गया है। भारत का दो–तिहाई कृषि क्षेत्र वर्षा पर निर्भर है, वर्षा की कमी और वृद्धि से भारतीय कृषि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। कृषि उत्पादन पर विपरीत प्रभाव से खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित नहीं हो पाएगी और गरीबों की स्थिति दयनीय होती जाएगी। इसके अतिरिक्त भारत की समृद्ध जैव विविधता का भी ह्रास होगा।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि जलवायु परिवर्तन की बढ़ती समस्या के समाधान के लिए राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न प्रयास किये जा रहे हैं। इस विषय में बहुत सी योजनाएं नीतियाँ एवं सम्मेलनों का भी आयोजन किया जा रहा है, ताकि आने वाली पीढ़ी को जलवायु परिवर्तन के होने वाले गम्भीर परिणामों से सुरक्षित रखा जा सके। इसके अलावा आवश्यकता है कि इन सम्मेलनों में हुए समझौतों का प्रभावी क्रियान्वयन किया जाए। वर्तमान समय में अमेरिका जैसा विकसित देश अपनी पर्यावरण सम्बन्धी जिम्मेदारियों से पीछे हट रहा है। अतः हमें यह बात समझना चाहिये कि यह पृथ्वी हम सभी की है और हम सभी का यह दायित्व है कि पर्यावरण संरक्षण में अपनी समुचित भूमिका निभाएँ और धरती को एक सुन्दर जगह बनाने का प्रयास करें। जलवायु परिवर्तन की समस्या का समाधान असम्भव नहीं है। अगर हम लक्ष्य के प्रति एकाग्रचित व सत्यनिष्ठता के साथ आगे बढ़ें तो इसमें अवश्य सफल होंगें, क्योंकि ''जो मंजिलों को पाने की चाहत रखते हैं, वो समुन्दरों पर भी पत्थरों के पुल बना देते हैं।'' [4]

भारत में जलवायु की रक्षा पर प्राचीन काल से ही ध्यान दिया जाता रहा है। इसका विस्तृत वर्णन संस्कृत साहित्य में पाया जाता है। सम्पूर्ण संस्कृत वाङ्मय के अवलोकन करने से सजगता के अनेक प्रमाण उपलब्ध हो जाते हैं। पुनः कहना अतिशयोक्ति न होगी कि भारतीय संस्कृति ग्राम–प्रधान रही है। खेती करना यहां का मुख्य व्यवसाय रहा है। ग्रामीण जनता के कन्धों पर ही कृषि का भार रहा है। वह गांवों में ही रहती थी।

राजा, साहूकार, शिल्पी नगरों में रहते थे, परन्तु शान्ति पाने के लिए वे वनों में जाते थे। उनके बालकों की शिक्षा गुरूकुलों में होती थी जो कि वनों के प्रशान्त वातावरण में प्रतिष्ठित रहते थे।

पर्यावरणीय जलवायु की शान्ति व्यवस्था का निर्देश यजुर्वेद में मिलता हैः–

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिः ओषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्तिः विश्वे देवाः शान्तिः ब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥

पृथ्वी, पर्वत, नदियाँ तथा वृक्ष आदि के लिए इस प्रकार की मानवीय संवेदनशील भावनाओं का उद्रेक करने के पीछे हमारे पूर्वजों की दृष्टि जलवायु की सुरक्षा तथा सन्तुलन पर केन्द्रित थी। उन्होंने सभी जीव–जन्तुओं में, पृथ्वी, आकाश तथा अन्तरिक्ष में सर्वत्र शन्ति की कामना की थी।

ऋग्वेद में पर्यावरणीय जल वायु से सम्बन्धित विभिन्न प्रकृति तत्त्वों का मानवीय संवेदना के धरातल पर विविध रूपों में वर्णन मिलता है तथा उन्हें हमारी धार्मिक भावनाओं से जोड़कर, अप्रत्यक्ष रूप से उनके संरक्षण एवं संवर्धन को मानवीय कर्तव्य के रूप में निरूपित किया गया है।

ऋग्वेद में लिखा है कि आकाश को पिता, पृथ्वी को माता, चन्द्रमा को भाई तथा अखण्ड, प्रकृति को बहन तुल्य प्रेम और सौहार्द देना चाहिए –

धौर्वः पिता पृथिवी माता सोमो भ्रातादिति स्वसा।
अदृष्टा विश्वदृष्टास्तिश्ठेतेलयता सु कम् ॥ [5]

यदि प्रकृति के नाना पदार्थों को हम आदर भाव दें और उन्हें जीवन का अंग मानकर नष्ट न होने दें तो वे हमारे लिए वरदान सिद्ध होंगे। इसीलिए निर्देश दिया गया है कि प्रकृति के शाश्वत नियमों का आदर करो, वे बड़ी मधुरता से जीवन में सहायक होते हैं। पृथ्वी को माता स्वरूपा मानकर आपकी स्तुति करते हुए कहा गया है कि है पृथ्वी माता ! हमें सोत्साह उत्तम मार्ग की ओर से चला तू हमें पीड़ा न दे। हमारे लिए सुखदायी बन। है! सर्वोत्पादिके। जैसे माता अपने पुत्र को अपने अञ्चल से ढकती है, वैसे ही तू भी रक्षक बन।

सूर्य की रोशनी मनुष्य, मनुश्येतर प्राणियों एवं वनस्पतियों के लिए कितनी उपयोगी है, हमारे वैदिक ऋषियों को इसका पूरा ज्ञान था। कल्याणदात्री सूर्य की रश्मियों से पृथ्वी में अन्न एवं पौष्टिक शक्ति पैदा होती है। गौ, अश्व आदि प्राणियों में भी उनसे उपयोगी बल एवं कर्म शाक्ति का सृजन होता है। औषधियों और फलों को भी इन्हीं से शक्ति मिलती है। ये ही आकाश में सूर्य को दीप्त करती है। रोग–निवारण आदि कर्मों में भी ये प्रभावी ढंग से उपयोगी सिद्ध होती है

ब्रह्मगामश्वं जनयन्त ओषधीर्वनस्पतीन्पृथिवीं पर्वतो अप।
सूर्यं दिवि रोहयन्तः सुदानव आर्याव्रता विसृजन्तो
अधिक्षमि॥ [6]

जलवायु में जल तत्व की बात करें तो सदानीरा सरिताएं इस घरा के वक्षस्थल को निस्तर सिंचित करती हुई प्राणिमात्र को पेयजल उपलब्ध कराती है, अतः ये भी हमारे लिए कन्दनीय हैं। पतितपावनी गङ्गा, यमुना, सरस्वती आदि नदियों की स्तुति इस प्रकार की गई है–

इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचतापरुष्ण्या।
असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयाऽर्जीकिये शृणुह्या सुषोमया॥

अर्थात् हे गङ्गा, यमुना, सरस्वती, परुष्णी के साथ शुतुद्रि मेरे इन स्तोतों को स्वीकार करो तथा असि की कन्या व मरुद्वृधा वितस्ता के साथ मेरी स्तुति को सुनो।
स्तुतिकर्ता उपासक ने वृक्ष, वन आदि की उपासना की है। बड़े ही रहस्यात्मक ढंग से वनों से संवाद करता है–हे वन समूह! तुम बिना पूछे ही आगे–आगे बढ़ते चले जाते हो, क्या तुम्हें किसी से भय–सा नहीं लगता अर्थात् उस धरती पर तुम्हें काटने वाले लोग बहुत हैं, परन्तु तुम अपने कटने की चिन्ता किये बिना बढ़े चले जा रहे हो –

अरण्यान्मरण्यसौ यां प्रेव नश्यसि।
कथं ग्रामं न पृच्छसि न त्वा भीरिव बिन्दति हि॥ [7]

वायु के विषय में वैदिक साहित्य में मिलता है कि वायु हमारा पिता, भाई, सखा आदि सब कुछ है। वह हमें जीवन के योग्य बनावें। स्वच्छ वायु प्राणदामिनी औषधि के समान है, जिससे हमारा जीवन स्वस्थ एवं निरोग रह सकता है। इसलिए सुतिकती उपासक ने ऋग्वेद में वायुदेवता की उपासना की है कि हमारे हृदय के लिए वायु शान्तिदायक औषधि के समान है। हमें आयु प्रदान करने वाली आयुवर्धक, नीरोग, पुष्टिकारक उत्तम वायु मिलती रहे। [8]
इसप्रकार हमारी सभ्यता एवं संस्कृति के आदि अन्य ऋग्वेद में सुखी एवं स्वस्थ जीवन की पूर्णता के लिए उपयोगी समस्त प्राकृतिक पदार्थों को जीवन के अभिन्न अंग के रूप में निरूपित करते हुए उनकी मानवीय सन्दर्भों में उपादेयता प्रतिपादित की गई है।
वेदों में जलवायु की पूर्णता के लिए विविधता को भी अनिवार्य माना गया, इसीलिए यजुर्वेद के प्रथम मन्त्र में उल्लेख किया गया है–

'यजमानस्य पशून् पाहि।''[9]

अर्थात् यजमान पशुओं की रक्षा करे। पशुओं की रक्षा होने पर ही जलवायु, प्रकृति, पर्यावरण आदि तत्तों की रक्षा की जा सकती है।
प्रत्येक मानव के द्वारा अन्नादि के लिए वर्षा की कामना की जाती है। वर्षा के अभाव में यह सृष्टि उद्देश्यविहीन हो जायेगी। ऊर्जा के लिए शाखा लग्नधूत्यादि का अपनयन किया जाता है। वर्षा रस स्वरूप है, उसी से सब में ऊर्जा का संचार होता है। तैत्तिरीय शाखा में कहा गया है–इश् ही ऊर्जा है। जैसे–''इषेत्वोर्जेत्वेत्याहेषमेवोर्ज यजमाने दधाति।''[10]
वैदिक साहित्य में इष् और ऊर्जा का परस्पर विशिष्ट सम्बन्ध है क्योंकि मन्त्रों में प्रायः ये दोनों शब्द मिलते रहते हैं। जलवायु संरक्षण में पशु समुदायों की भी एक विशिष्ट भूमिका है। पशुओं में गायें श्रेष्ठ हैं। 'वायवस्थ' मन्त्रांश को पढ़कर बछड़ों को गाय से दूर रखा जाता है। अगर बछड़े गाय के साथ होंगे तो दूध प्राप्त करना असम्भव होगा। ये पशु–समुदाय वायु देवता से ही रसित होते हैं। वायु अन्तरिक्ष स्थानीय देवता है तथा समस्त पशु समुदाय गृहनिर्माण में असमर्थ होने के कारण खुले आकाश में ही रहते है। अतएव ये वायवस्थ हैं। वायु अपने अवशोषक गुण के कारण पृथिवी को पवित्र करता है, उसी प्रकार गवादि पशु के गोबर से लिम्पन द्वारा पृथ्वी पूत होती है। [11]

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. वामनावतरणम् 7/13–25 बही, 8/22–25
2. भागीरथीदर्शनम् (प्रथम तरंग तथा द्वितीय तरंग)
3. पार्थचरितामृतम् (द्वितीय रत्न तथा तृतीय रत्न)
4. यजुर्वेद–36/17
5. ऋग्वेद–10/18/11
6. ऋग्वेद–20–74/4
7. ऋग्वेद–10/146/1
8. वही–10/186/1
9. यजुर्वेद 1/1
10. वैत्तिरीयशाखा (यजुर्वेद)
11. तैतिरीय संहिता (यजुर्वेद)।